धम्मपद में पर्यावरणीय संरक्षण का विश्लेषण

गीतांजलि कुमारी
शोध छात्राा (दर्शनशास्त्रा)
ल0 ना0 मि0 वि0, दरभंगा

बौद्ध दर्शन करूणा, मुद्रिता, मैत्राी तथा शांति का संदेश प्रदान करता हैं। भगतान बुद्ध ने ज्ञान और कर्म को महत्वपूर्ण माना है। मनुष्य का जीवन आचरण के द्वारा संयमित, संतुलित एवं व्यवस्थित होकर मध्यममार्ग पर अग्रसर होता है। ''बौद्ध धर्म, मुख्यतः, आचार धर्म है। बुद्ध जानते थे कि मनुष्य का अच्छा या बुरा होना, सुख या दुख पाना, उसके कर्म और चरित्रा पर निर्भर करता है। आदमी का ध्यान इस बात पर रहना चाहिए कि वह करता क्या है, इस बात पर नहीं कि वह जनता क्या है । करने और जानने में अर्थात् कर्म और ज्ञान में, बुद्ध देव ने कर्म को मुख्य माना इसलिए, उन्होंने मनुष्य का ज्ञान कभी – भी उन विषयों की ओर जाने नहीं दिया, जो बुद्धि से समझे नहीं जा सकते और जिनके बारे में केवल अनुमान और अटकल बाजी से ही काम लेना पड़ता है।''[1]

अव्याकृत प्रश्नों पर मौन रहकर मनुष्य को भगवान बुद्ध ने धरातल पर खड़ा कर दिया और सम्पूर्ण संसार के चर – अचर की ओर दृष्टिगत करने की प्रवृति को जन्म दिया। मात्रा मनुष्य ही नहीं, प्रकृति के अन्य उपादानों जैसे, समुद्र, पर्वत, जंगल, पशु, पक्षी आदि के लिए भगवान बुद्ध ने अपने संदेश के माध्यम से एक विलक्षण सुर, ताल और लय को जन्म दिया जिसका स्थायी भाव महाकरूणा को माना जाता है। बोधिवृक्ष के नीचे बैठकर भगवान बुद्ध ज्ञान के प्रकाश से आलोकित हुए। अतएव उनकी विचारधारा में, उनके उपदेशों में तथा उनके संदेश में वृक्ष के प्रति तथा अन्य प्राणियों के प्रति असीम अनुराग परिलक्षित होता है इसी अनुराग में बौद्ध दर्शन का पर्यावरणीय में नैतिकता के तत्व अंर्तनिहित हैं। अतएव प्रस्तुत शोधप्रत्रा का उद्देश्य बौद्ध दर्शन में पर्यावरणीय नीतिशास्त्रा के तत्वों को उद्घाटित करना है। भगवान बुद्ध का विचार त्रािपिटक में सन्निहित है। सुत्तपिटक के खुद्दनिकाय में पंद्रह ग्रंथ है – जिनमें एक ग्रंथ धम्मपद भी है। बौद्ध दर्शन में धम्मपद को सारग्रंथ के रूप में स्वीकार किया जाता है। अतएव प्रस्तुत शोधपत्रा के केन्द्र में धम्मपद को रखा गया है तथा धम्मपद में पर्यावरणीय नीतिशास्त्रा से संबंधित अवधारणाओं का विश्लेषण किया जाना है।

पर्यावरणीय नीतिशास्त्रा में मनुष्येत्तर जीवों तथा भौतिक वस्तुओं से भी मनुष्य सम्बन्ध रहता है नैतिक निर्णय लेने के क्रम में उत्तरदायित्व मनुष्य का हैं। मनुष्य ही नैतिक निर्णय लेने में समर्थ हैं। अतैव पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्रा में मनुष्य को गंभीर चिंतन तथा इससे संबंधित आचरण करना चाहिए। मनुष्येत्तर जीवों तथा भौतिक वस्तुओं में संवेदना का अभाव होता है। अर्थात जिस तरह मनुष्य में संवेदनाएँ होती है,

उस तरह की संवेदनाएँ पशु अथवा पेड़ – पौधों में नहीं होते हैं। यहाँ स्पष्ट करना आवश्यक है कि जीवधारियों की अस्तित्व आवश्यकताएँ होती है और इसलिए उनकी अपेक्षाओं को पूरा करना मनुष्य का नैतिक दायित्व माना जाता है। क्योंकि अनेक तरह की अपेक्षाओं की पूर्ति पशु अथवा पेड़ पौधे स्वयं नहीं कर सकते हैं । पुनः यह भी ध्यान देने योग्य तथ्य है कि मनुष्य के शुभ जीवन के लिए पर्यावरणीय संतुलन की आवश्यकता होती है। मनुष्य के जीवन की गतिशील और व्यवस्थित करने में पेड़ – पौधे, पशु – पक्षी तथा भौतिक वस्तुओं का भी योगदान होता हैं। भगवान बुद्ध संवेदना को एक गरिमा प्रदान करते हुए कहते हैं कि मनुष्य में संवेदना को करूणा में बदलने की क्षमता होती है और अष्टांग मार्ग का अनुशरण करने पर स्वतः वह महाकरूणा से समन्वित हो जाता है। अतः भगवान बुद्ध इस बात पर बल देते हैं कि मनुष्य को नैतिक निर्णय लेने की क्षमता और प्रवृत्ति होनी चाहिए धम्मपद में मनुष्य के नैतिक आचरण के संबंध में विचारों को अनेक वर्गों में विभाजित किया गया है। जिसका उद्देश्य मनुष्य, मनुष्येत्तर जीव तथा भौतिक जगत का संतुलन स्थापित हो। यह संतुलन नैतिक बोध के द्वारा ही संभव हो सकता है वस्तुतः धम्मपद नैतिक बोध का ग्रंथ है अतः पर्यावरणीय नीतिशास्त्रा से संबंधित अनेक प्रश्नों की विवेचना प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से धम्मपद में द्रष्टव्य होता है।

भगवान बुद्ध वास्तव में व्यवहारिक जीवन दर्शन के प्रणेता है। उन्होंने शुभ जीवन के लिए अष्टांग मार्ग का प्रणयण किया है और वह एक विलक्षण साधन है। जिसके आधार पर मनुष्य निर्वाण प्राप्त कर सकता है और असीम शांति का अनुभव कर सकता है। भगवान बुद्ध के विचारों को त्रिपिटक में संग्रहित किया गया है। अतः बौद्ध साहित्य का अवगहन, खासकर भगवान बुद्ध के जीवन दर्शन को समझने के लिए त्रिपिटक है – सुत्तपिटक, विनयपिटक और अभिधम्मपिटक। ये सभी पिटक पालि भाषा में है। सुत्तपिटक के पाँच निकाय है – (प) दीधनिकाय, (पप) माजझिमनिकाय (पपप) संयुक्त निकाय (पअ) अंगुत्तर निकाय और (अ) खुद्दनिकाय।

खुद्दनिकाय में पंद्रह ग्रंथ हैं – 1. खुद्दक पाठ, 2. धमम पदं, 3. उदान, 4. इतिवुतक, 5. विमानवत्थु, 6 पेतवत्थु, 7. थेरगाथा, 8. थेरोगाथाना, 9. जातक (547 कथाएँ), 10. निद्देस, 11. पंटिसंभिदामग्ग, 12. अवदान, 13. बुद्धवंश 14. चारियापिंटंक और 15. पंटिसंभिदामग्ग

इस प्रकार खुद्दनिकाय के सभी ग्रंथ महत्वपूर्ण माने जाते है। धम्मपद का वही स्थान है जो स्थान हिन्दू धर्म में श्रीमद् भगवत गीता का है।

उपयुक्त सभी ग्रंथ बौद्ध साहित्य के अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है। परंतु धम्मपद की विलक्षणता इस र्थ में है कि इसके प्रत्येक पद मनुष्य को परिष्कृत कर उसके जीवन को अर्थ पूर्ण बनाने में सक्षम है। धम्मपद में नीतिशास्त्रा से संबंधित अनेक प्रश्नों का समाधान सहज रूप में किया गया है।

भगवान बुद्ध वास्तव में बहुजन हिताय बहुतन सुखाय सिद्धांत के प्रतिपादक है और इसीलिए सामान्य व्यक्ति को ध्यान में रखकर पालि भाषा का उन्होंने प्रयोग किया है तथा अपने विचारों को इस तरह से अभिव्यक्ति प्रदान किया है कि जिससे सामान्य व्यक्ति भी अनायास उसके अर्थ को समझने में समर्थ हो सके। इस संदर्भ में महत्वपूर्ण तथ्य यह भी है कि भगवान बुद्ध अष्टांग मार्ग में 'सम्यक कर्मांत' को भी एक मानते हैं। इसलिए वे आचरण की पवित्राता पर जोर देते है। एक वृक्ष के विषय में ज्ञान होना आवश्यक है लेकिन ज्ञान पर्याप्त नहीं है, क्योंकि इस ज्ञान मात्रा वृक्ष के सुख–दुख के हम सहभागी नहीं हो सकते है। इसके लिए आवश्यक है कि मनुष्य में ज्ञान के साथ – साथ करूणा भी हो। करूणा के कारण ही मनुष्य सायं या प्रातः वृक्ष में जल देने के लिए उद्धव होता है और इसी करूणायें अनुप्रयुक्त नीतिशस्त्रा के तत्त्व अन्तानहित है। भगवान बुद्ध के जीवन – दर्शन के विकास में वृक्ष का बहुत बड़ा योगदान है। संन्यासी बनने के उपरांत उन्होंने यह अनुभव किया कि शरीर को सन्यासी होने के बाद भगवान जंगल – जंगल धूमते रहे, पर्वतों पर परिभ्रमण करते रहें। जंगल और पर्वत पर जो कुछ मिलता रहा आहार के रूप में ग्रहण करते रहें। इस प्रकार शरीर को साधना के नाम पर अनेक प्रकार की यातना देते रहें। परिणामतः शरीर सुख कर काटा हो गया और कोई आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ। आगे चलकर पीपल के वृक्ष के नीचे बैठकर उन्हें बोधिज्ञान प्राप्त हुआ। उन्हें शांति मिली और शरीर सौम्य हो गया। बौद्ध दर्शन का मध्यम मार्ग इसी अनुभूति का परिणाम है।

पर्यावरणीय नीतिशास्त्रा के अन्तर्गत वनस्पति जगत, पशु जगत तथा भौति जगत समाहित है। पर्यावरण होकर चिंतन और मनन करना चाहिए क्योंकि मनुष्य के जीवन की निरंतरता के लिए पर्यावरण संरक्षण आवश्यक हैं। मनुष्य का यह नैतिक उत्तरदायित्व भी होकर अनुप्रयुक्त पर्यावरणीय नीतिशास्त्रा मात्रा चिंतन मनन तक सीमित नहीं हैं। यह क्रिया प्रधान हैं।

अनुप्रयुक्त नीतिशास्त्रा आचरण पर बल देता हैं। बौद्ध दर्शन का अष्टांग मार्ग ज्ञान, भावना और कर्म का समन्वय है। अष्टांग मार्ग मात्रा सम्यक संकल्प तथा सम्यक दृष्टि तक सीमित नहीं हैं, प्रत्युत सम्यक कर्मात को भी आवश्यक मानता है। अतः धम्मपद का मूल निहितार्थ आचरण है। कोई भी व्यक्ति आचरण के द्वारा ही परिष्कृत समझा जाता है।

मनुष्य का जीवन पर्यावरण पर आश्रित है। अतः पर्यावरणीय संतुलन की आवश्यकता होती है। यहाँ स्पष्ट करना आवश्यक है कि बुद्धकालीन युग में मनुष्य के द्वारा पृथ्वी वनस्पति अथवा पशु का शोषण आज की तरह नहीं होता था। उस युग में मनुष्य प्रकृति – संतान की तरह जीवन व्यतीत करता था तथा आनंद में रहता था। आधुनिक संदर्भ में धम्मपद के द्वारा मनुष्य को उसके उत्तरदायित्व के प्रति जागरूक किया जा सकता है। धम्मपद प्रेरणा का श्रोत है। धम्मपद के माध्यम से भगवान बुद्ध यह संदेश

देना चाहते हैं कि चित् को एकाग्र करने की आवश्यकता है क्योंकि सम्यक संकल्प युक्त चित् के द्वारा ही सर्वाधिक कल्याण संभव है। द्रष्टव्य है –

न तं माता पिता कयिरा अ××ों वापि च ×ातका।

अपने फैल मिटाय ले, गली – गली कर सैल।। साखीग्रंथ।।[2]

पर्यावरण के प्रति प्रेम और उसके संरक्षण का मूलमंत्रा अहिंसा में सन्निहित है। अहिंसा निषेधात्मक प्रत्यक्ष नहीं हैं। अहिंसक मनोभाव का उदय करूणा से होता है। मनुष्य वनस्पति जगत से भार करने लगता है और छोटे – छोटे फूल के पौधे तथा बड़े – बड़े पेड़ों को चकित भाव से देखता है और धीरे – धीरे एक दिव्य संगीत कर्णगोचर होने लगता है। इस संगीत के लय में प्रेम का ध्वनि है, लय है, आरोह – अवरोह है। यह संगती जब मनुष्य अंतस्थल से सुनने लगता है तो करूणा का उदय होता है।

के0 सच्चिदानन्द मूर्ति ने मनुष्य और प्रकृति के संबंध को स्पष्ट करते हुए लिखते है कि विभिन्न अनुभूतियाँ में व्यक्ति के अपने 'अहं' की अहिंसा एक समान्य तत्व का बोध, सहजता होकर उसे एक कर्ता तथा भोक्ता के रूप में प्रकट करता है। मनुष्य कभी भी निष्क्रिय नहीं है। वह स्वभावतया ही क्रियाशील है। अन्य व्यक्तियों तथा संसार को वह अपने अस्तित्व से उत्तर देता है ; जो कुछ भी, वह था, या है, या हो सकता है।[3]

वस्तुतः भगवान बुद्ध का धम्मपद मनुष्य के जीवन में वैचारिक क्रांति उत्पन्न करता है। मनुष्य करूणा से परिपूर्ण होकर समग्र संसार के कल्याण के लिए वह समर्पित हो जाता है। धम्मपद के विभिन्न वग्गों से स्पष्ट होता है कि बौद्ध दर्शन । धम्मपद के विभिन्न वग्गों से स्पष्ट होता है कि मनुष्य का जीवन मात्रा खुद के लिए नहीं होता है। उसका जीवन अन्य जीवों, भौतिक पदार्थों तथा संसार के अन्य उपक्रमों के लिए भी महत्वपूर्ण है। मनुष्य विवेकशील प्राणी हैं। धम्मपद के माध्यम से मनुष्य में अंर्तनिहित विवेक के तत्व जाग्रत होता हैं। ऐसे ही जाग्रत व्यक्ति पर्यावरण संरक्षण के लिए सचेत हो जाते है तथा उनके भीतर यह बोध उत्पन्न होता है कि यह उसका नैतिक उत्तरदायित्व भी है। इस नैतिक उत्तरदायित्व का पालन दो प्रकार से होता है – (प) प्रक्रिया में मनुष्य वृक्ष लगाता है जलाशय का निर्माण करता है, तथा पर्यावरण से संबंधित तत्वों की रक्षा में गतिशील हो जाता हैं। मनुष्य इसके लिए निरंतर योगदान करता रहा हैं। यह एक व्यापक आंदोलन का स्वरूप लेता है। वस्तुतः पर्यावरण संरक्षण व्यक्ति तक ही सीमित नहीं रहता है। बल्कि इसका स्वरूप सामूहिक हो जाता हैं। धम्मपद व्यक्ति से चिंतन को समूह तक ले जाने में प्रेरणा का काम करता है। (पप) इस क्रम में मनुष्य पर्यावरण के धंगसात्मक गतिविधि को रोकने का प्रयास करता है। वनस्पति जगत, पशु जगत तथा भूत जगत का अनेक प्रकार से शोषण एवं दोहण किया जाता है। परिष्कृत मनुष्य इस तरह की प्रवृति को रोकने का प्रयत्न करता है तथा पर्यावरण

संरक्षण को एक सामूहिक गतिविधि प्रदान करने में सफल होता है। इस लक्ष्य तक पहुँचने में धम्मपद की महत्वपूर्ण भूमिका है। भगवान बुद्ध का संदेश इस कार्य में मनुष्य के लिए प्रेरक तत्व का कार्य करता है।

भगवान बुद्ध के इस विचार से अर्थर्ववेद के इस मंत्रा में साभ्यप्रतीत होता है।

''देवा मनुष्या पशवो वभांसि

सिद्धाः सभक्षोरगभूतसङ्धाः।

प्रेताः पिशाचाः तरवः समस्ता

ये चात्रामिच्छान्ति मया प्रदत्तम।।

पिपीलिकाः कीटपतत्र्काद्या

बुभूक्षिताः कर्मनिबधबद्धाः।

प्रयान्तु ते तृप्तिमिदं मयान्नं

तेभ्यो विसृष्टं सुखिनो भवन्तु।।''[4]

इस मंत्रा में तो देव, पितर आदि के साथ – साथ पक्षी, सर्प, कीट, पतंग, वृक्ष आदि के लिए भी शुभ कामना का स्पष्ट उल्लेख पाया जाता है।

बौद्धधर्म में अष्टांग मार्ग का महत्त्व मात्रा इसलिए नहीं हैं, इसमें मनुष्य निर्वाण प्राप्त करता है। मनुष्य में शील और प्रज्ञा को विकसित कसे में भी यह सहायक है। प्रथा का तात्पर्य विलक्षण ज्ञान से हैं तथा शील आचरण से संबंधित है इस प्रकार मनुष्य ज्ञान और आचरण से समन्वित होकर पर्यावरण संरक्षण की ओर स्वतः अग्रसर होने लगता है।।

इस संदर्भ में अरहन्तवग्गो के निम्नलिखित पद् उल्लेखनीय है –

द्रष्टव्य है – रमणीयामि अर××ानि यत्थ न रमती जनो।

वीतरागा रमिस्सन्ति न ते कामगवे सिनो।।[5]

तात्पर्य यह है कि जंगल अत्यंत ही रमणीक अर्थात सुन्दर है। धम्मपद में कहा गया है कि इस मनभावन जंगल में वैरागी पुरूष रमण करते है। आनंन्दित होते है। ऐसे वैरागी पुरूष सांसारिक भोगों के अन्वेषण में नहीं लगे रहते हैं इस पद का व्यापक अर्थ है इसमें जंगल का तात्पर्य केवल आरण्य से नहीं है। जंगल कहने से पशु, पक्षी, कीट, पतंग के साथ – साथ वृक्ष सन्निहित होते है। इस प्रकार इस पद में पशु जगत, वनस्पति जगत तथा भौतिक जगत का एक समन्वित रूप है। अतः मनुष्य पशुजगत, वनस्पतिजगत तथा भौतिक जगत का संरक्षण करना चाहते हैं क्योंकि इसके कारण संसार रमणील प्रतीत होता है। वर्तमान संदर्भ में यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि मनुष्य न केवल जंगल के संरक्षण के प्रति उदासीन हो गया है, अपितु वह इसका उच्छेदन करने में सक्रिय है। ऐसी स्थिति में धम्मपद् का यह संदेश संजीवनी का काम करता है।

बुद्ध का दर्शन और उनका दार्शनिक विचार प्रेम और करूणा की आधारशिला पर संरचित हुआ है तथा इसका उद्देश्य संसार के सम्पूर्ण प्राणियों का कल्याण है। भगवान बुद्ध धम्मपद् के माध्यम से आध्यात्मिक ऊर्जा को विकसित करने का उपदेश देते है। आध्यात्मिक चेतना के कारण मनुष्य में जीवों के साथ एक आत्मीयतापूर्ण संबंध की स्थापना होती है। किसी सामान्य वृक्ष के साहचर्य में भी मनुष्य अपनापन अनुभव करने लगता है। वृक्ष के पत्ते, उसकी टहनियाँ तथा फूलों को देखकर आमंदित हो जाता है। इसी प्रकार यदि उसके स्वरूप में कहीं भी ऐसा लगता है कि वह रूग्ण हो रहा है तो वह मर्याहत हो जाता है। यदि किसी जीवित वृक्ष को कोई काटकर गिरा देता है तो उसे लगता है कि यह वीभष्त धटना है और हिंसा भी है। धम्मपद का मूल उत्स करूणा है। फलतः बौद्धदर्शन खासकर धम्मपद् का मूल उद्देश्य ऐसे भावों को जगाना है जिसके द्वारा मनुष्य में अंतनिहित प्रेम और अहिंसा के तत्त्व विकसित हो सके। अहिंसा का भाव मात्रा मनुष्य तक सीमित नहीं है यह संसार के प्रत्येक जीव और वनस्पति में व्याप्त छोटे – छोटे पेड़ – पौधे तक व्याप्त है। धम्मपद के विभिन्न पदों के द्वारा संरक्षण के सिद्धांत को निरूपित किया गया है। भगवान बुद्ध का अष्टांग मार्ग मात्रा सिद्धांत तक ही सीमित नहीं है। यह सम्यक दृष्टि और सम्यक संकल्प में ही समाप्त नहीं होता है प्रत्युत सम्यक् कर्मात से होते हुए समयक समाधि तक पहुँच कर पूर्ण होती है। तात्पर्य यह है कि मनुष्य का जीवन विचारों में सिमट कर नहीं रह जाना चाहिए। वस्तुतः इसकी परिणत आचरण में होनी चाहिए। इस अर्थ में भगवान बुद्ध का नीतिशास्त्रा धम्मपद के माध्यम से आचरण पर जोर देता है और निरंतर सावधान करता है कि मनुष्य में वैचारिक उध्धता के साथ – साथ आचारमूलक पवित्राता होनी चाहिए और इसी आचरण में धम्मपद में अंर्तनिहित पर्यावरणीय नीतिशास्त्रा के संदेश देखे जा सकते है। अहिंसा का भाव इतना व्यापक है कि भूत जगत भी इससे वंचित नहीं रहता है। पर्वत, नदी, समुद्र और दूर – दूर तक फैला हुआ निरंतर मनुष्य को संतोष देता है

कि संसार एक नियम पर गतिशील है। इस भौतिक जगत का दोहन होने लगता है अथवा उसपर किसी प्रकार का आधात पहुँचने लगता है, बौद्ध – दर्शन के विचारों में प्रशिक्षित व्यक्ति समझता है कि यह भी हिंसा का ज्वलंत उदाहरण है। धम्मपद में विभिन्न स्थलों पर मनुष्य को परिष्कृत करने के मंत्रा संयोजित किये गये है। उन विचारों के कारण तथा उन्हें आत्मसात कर लेने के उपरांत मनुष्य नैतिक उत्तरदायित्व को समझने लगता है। इस कारण वह पर्यावरण के संरक्षण की ओर अग्रसर होता है। धम्मपद के कारण में संरक्षण के भाव मनुष्य में स्वतः उद्भूत होता है। यह किसी स्वार्थ से परिचालित नहीं होता है।

निवार्ण शब्द का अर्थ है 'बुझना' : जैसे तेल के क्षय से दीपक बुझ जाता है, वैसे ही अविधा और कलेश के क्षय से धीरे पुरूष निर्वाण प्राप्त करते है। बुद्ध के अनुसार क्षय अविधा और उसके कार्यों का होता है, निर्वाण या मुक्त का नहीं[6] धम्मपद का भी लक्ष्य मनुष्य को निर्वाण की ओर अग्रसर करना है और इस चेतना के प्रवाह को विस्तार देने के लिए तकनीक को भगवान बुद्ध ने विकसित किया है। निर्वाण एक भावात्मक बोध है और निर्वाण तक पहुँचने के उपक्रम में पर्यावरण की एक महत्वपूर्ण भूमिका होती है। मनुष्य के जीवन के लिए, शांति के लिए और निर्वाण के लिए पर्यावरण एक आधारभूत संरचना का कार्य करता है। अतः धम्मपद्र के विभिन्न पदों के द्वारा विभिन्न दृष्टियों से मैत्री का संदेश दिया गया है। संदेश का लक्ष्यार्थ पर्यावरण से मित्राता भी है। मैत्री का भाव मनुष्य को उदात्त बनाता है और साथ ही कर्त्तव्य बोध को जागृत करता है। मनुष्य दिनचर्या में व्यस्त रहता है, संधर्ष करता है। और इस परिवर्तनशील संसार से चला जाता है। धम्मपद इस प्रकार मनुष्य के इतवृति से संतुष्ट नहीं है। वह मनुष्य के भीतर सुषुप्त अवस्था में रहनेवाले अच्छे भावों को जगाने पर जोर देता है। प्रकृति के साहचर्य के लिए उत्प्रेरित करता है। यही कारण है कि भगवान बुद्ध ने धम्मपद में निर्वाण तक पहुँचने के मार्ग की ओर इंगित करते है तथा मनुष्यों के भीतर के ''श्रेष्ठ मानव'' को मूर्त रूप देने का प्रयास करते है। क्योंकि निर्वाण तक ऐसे ही परित्कृत मनुष्य पहुँचने में सफल होते है तथा दूसरे को भी इस पथ पर आरूढ़ करने में सहयोग प्रदान करते है। वस्तुतः निर्वाण ही परम सुख है (निब्बानं परमं सुखम, धम्मपद 18) धम्मपद के धम्ममदुवग्गों में कहा गया है –

न तेन अरियों होति येन पाणनि हिंसति।
अहिंसा सब्बापाणानं अरियों ति पवुच्चति।।[7]

तात्पर्य है कि प्राणियों की हत्या करने से कोई आर्य नहीं हो सकता है। सभी प्राणियों के प्रति अहिंसा भाव रखने से ही उसे आर्य कहा जाता है। इस पद के निहितार्थ से परिलक्षित होता है कि किसी भी प्राणी की हत्या नहीं करनी चाहिए। इस प्रकार मनुष्य, पशु, पक्षी, अथवा वृक्ष की हत्या का धम्मपद निषेध करता है। अहिंसा मूलक भाव के साथ जीने के लिए उत्प्रेरित करता है। इस तरह अहिंसा के मूल

में पर्यावरण के संरक्षण का सिद्धांत भी छुपा हुआ है। पर्यावरण की निरंतरता के लिए तथा उसकी समृद्धि के लिए आवश्यक है कि मनुष्य वनस्पति जगत, पशु जगत तथा भूत जगत पर न किसी प्रकार का आधात पहुचाएँ और यदि उसपर कोई संकट आ जाये तो उसे संकट मुक्त करने का प्रयास करे।

धम्मपद में इसलिए कहा गया है कि आधात पहुँचाकर अथवा किसी दुसरे को दुख देकर जो मनुष्य अपने लिए सुख चाहता है वे वैर के साथ चिपका रहता है और वैर से मुक्त नहीं होता है। अतः मनुष्य को यह समझना चाहिए कि पर्यावरण का आधात पहुँचाने से सुख प्राप्त नहीं हो सकता है। प्रकारातर से मनुष्य दुखों में ही उलझ जाता है क्योंकि मनुष्य के जीवन के लिए तथा मनुष्य को स्वस्थ्य रखने के लिए पर्यावरण का महत्वपूर्ण योगदान होता है अतः धम्मपद का यह पद उल्लेखनीय है –

परदुलखूप दानने अन्तनो सुखमिच्छति।
वेरसंग्ग संसफो वेरा सो न परिमुच्छति।।[8]

धम्मपद इस बात पर जोर देता है कि कोई मनुष्य अनायास निर्वाण प्राप्त नहीं करता है। साधना के द्वारा संयम के द्वारा अहिंसा के मार्ग पर चलकर मनुष्य दुखों से मुक्ति पा सकता है धम्मपद में विवेचित अहंसा वैश्विक स्तर पर पर्यावरण को संरक्षित करने की एक यांत्रिाक प्रक्रिया है। इस यांत्रिाक प्रक्रिया का उपयोग मनुष्य प्रेम और करूणा से समन्वित होकर करता है। क्योंकि ऐसा करने से उसे दुख के स्थान पर शांति की प्राप्ति होती है।

द्रष्टव्य है :– अहिंसका ये मुनयो निच्चं कयेन संवुता।
ते यन्ति अधुतं ठानं यत्थ गत्वा न साचरे।।[9]

तात्पर्य यह है कि जो मनुष्य अहिसंक भाव से कार्य करता है और जिसका मन संयमित है वह शोक प्राप्त नहीं करता है अर्थात शोक के स्थान पर वह शांति का अनुभव करता है।

धम्मपद के विभिन्न वग्गों के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य के भीतर की दो धाराएँ – पाप और पुण्य मनुष्य को उपवेलित करता रहता है। यह मनुष्य पर निर्भर करता है कि वह पाप मग्न हो जाता है अथवा धार्मिक कर्त्तव्यों के प्रति सचेत होकर कार्य करता है। धर्म की ओर उनमुख करने के लिए धम्मपद में मनुष्य को अनेक स्थलों पर शील के महत्व को समझाया गया है। शील के द्वारा ही मनुष्य परिष्कृत होता है और प्रज्ञावान होकर धर्मपथ पर अग्रसर होता है। अतः पर्यावरण संरक्षण के लिए शील और प्रज्ञा का होना अत्यंत आवश्यक है। इस संदर्भ में धम्मपद् का पद् द्रष्टव्य है।

एतमत्थवसं अत्वा पण्डितो सीलसंवुतो।
निब्बाणं – गमनं मग्गं खिघमेव विसोधये।।[10]

पर्यावरणपरक आचारनीति के संबंध में यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि भौतिक जगत के जड़ होने से उनके प्रति कोई आचारनीति कैसे संभव हो सकती है। परंतु यह आपत्ति गंभीर विश्लेषण के उपरांत निरर्थक जान पड़ता है। इस संबंध में दो अवधारणाओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए – 1. अस्तित्व परक 2. उपयोगिता परक। पशुजगत एवं वनस्पति जगत की अपनी आतंरिक मूल्यवत्ता है। भौतिक जगत की विशिष्ट मूल्यवत्ता का हम निषेध नहीं कर सकते है। क्योंकि ब्रहमाण्ड एक समष्टि है और उसमें भौतिक जगत की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अतः मनुष्य को इस भौतिक जगत के संरक्षण पर ध्यान देना चाहिए और उसका सम्मान भी करना चाहिए। मनुष्य का कल्याण भौतिक जगत के अस्तित्व को स्वीकार करने में ही है। क्योंकि पर्यावरण कर मूल आधार भौतिक जगत को माना जाता है। इस संबंध में दूसरा महत्वपूर्ण तथ्य उपयोगिता से संबंधित है। विभिन्न उद्योगों के कारण कोयला, खनिज, तेल आदि का उपयोग अनियंत्रित रूप से किया जा रहा है। जिससे वातावरण प्रदूषित हो रहा है। पृथ्वी के ऊपर का आजोन – परत नष्ट हो रहा है और पृथ्वी के ऊपर रासायनिक गैस की कृत्रिम – परत बनती जा रही है। अतः मनुष्य को भौतिक जगत की उपयोगिता को ध्यान में रखकर इस संकट से त्राण होने के लिए सचेष्ट होना आवश्यक है। भौतिक जगत की उपयोगिता अनेक क्षेत्राों में परिलक्षित की जा सकती है। यह मनुष्य के अस्तित्व के लिए अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। अतः भौतिक जगत को भी पशु जगत तथा वनस्पति जगत की तरह ही समझ कर पर्यावरण से संबंधित समस्याओं के निराकरण के लिए मनुष्य को उन्नमुख होना आवश्यक है क्योंकि वृक्ष ही शांति, संयम और धैर्य का प्रतीक है। मनुष्य को ऑक्सीजन के साथ साथ अनेक लाभ वृक्ष से होते रहते है। धम्मपद में अनेक स्थलों पर इस तथ्य का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उल्लेख किया गया है कि नदी, पर्वत और समुद्र मनुष्य के जीवन के लिए प्रेरणा का श्रोत बनता है।

धम्मपद में पर्यावरण के संरक्षण के लिए कर्त्तव्य पालन करने पर जोर दिया गया है। इस संदर्भ में 'रामधारी सिंह दिनकर' की उकित उल्लेखनीय है। बौद्ध धर्म एक ओर जहाँ निवृत्तिमार्गी है और यह शिक्षा देता है कि जन्म और जीवन सुख नहीं, दुख के कारण है, वहाँ दुसरी ओर, वह कर्म – मार्ग में भी पूरे जोर से विश्वास करता है और उसके उपदेशों का निचोड़ यह है कि मनुष्य की मुक्ति ज्ञान के कथन से नहीं, बल्कि आचार और कर्त्तव्य के पालन से होताप है।[11]

मनुष्य का अस्तित्व पर्यावरण पर निर्भर करता है। इसका तात्पर्य यह है कि मनुष्य को जीवित रहने के लिए पर्यावरण एक बहुत महत्वपूर्ण कारक है। मनुष्य के लिए जल, ऑक्सीजन सूर्य का प्रकाश, स्वच्छ हवा आदि अनेक ऐसे पर्यावरण से प्रापत होनेवाले तत्व है जिसके आधार पर मनुष्य स्वस्थ्य रहता है। और जीवन का आनन्द प्राप्त करता है। मनुष्य का यह नैतिक उत्तरदायित्व है कि पर्यावरण से प्राप्त

होनेवाले इन तत्वों के प्रति कृतज्ञय रहें। परंतु यह कृतज्ञता मात्रा भावना तक सीमित नहीं होनी चाहिए। इसे क्रियात्मक होने की आवश्यकता है। इसी संदर्भ में मनुष्य के लिए पर्यावरण का संरक्षण करना आवश्यक है। यह निसंदेह नैतिक दायित्व है। मनुष्य के लिए इसकी आधारशिला धम्मपद् के द्वारा निर्मित की गयी है। ज्ञानी मनुष्य दूसरे व्यक्ति को भी प्रेरित करता रहता है। परंतु जिसका ज्ञान परिपूर्ण नहीं हैं, वह श्रद्धा रहित हो जाता है। इसलिए धम्मपद में कहा गया है –

अनवपिचित्तरस सद्धम्मं अवि जानतो।

परिप्लवपसादस्स प××ा न परिपूरित।।[12]

तात्पर्य यह है कि जिसका चित्त स्थिर नहीं है। जो धर्म के मर्म को नहीं जानता है। और जिसकी श्रद्धा डगमगाती रहती है, उसका ज्ञान परिपूर्ण होता है अतः पर्यावरण संरक्षण के लिए धम्मपद का जोर मनुष्य के परिष्कार में है। मनुष्य में पाश्विकता भी है और विवेकशीलता भी है। धम्मपद मनुष्य के भीतर में विवेक जागृत करता है। द्रष्टव्य है धम्मपद का निम्नांकित पद –

न तं माता पिता कायेरा अ××ो वापि च आतका।

सम्मापाणिहितं चितं सेध्यसो न ततो करो।।[13]

इसका तात्पर्य कि जितना हित न माता – पिता कर सकते है। और न अन्य जाति – बिरादरी के लोग, उससे अधिक सम्यक् संकल्प युक्त चित्त करता है।

धम्मपद से प्रशिक्षित मनुष्य जंगली क्षेत्रों तथा प्राकृतिक वातावरणों से आनन्ददायक अनुभूति प्राप्त करना चाहता है। उसके लिए उपभोगतावाद आदर्श नहीं है। वह प्राकृतिक वस्तुओं का उपयोग आवश्यकता के अनुसार ही करना चाहता है। उसका अपव्यय नहीं करता है तथा उपभोग करने में सावधान रहता है जिससे कि वातावरण पर केवल अनुकूल प्रभाव पड़ता है। पर्यावरण संरक्षण के लिए आवश्यक है कि हमें इसके किसी अंग का साधन के रूप में उसी सीमा तक उपयोग करना चाहिए जिस सीमा तक उसका उपयोग अपरिहार्य है। अतः धम्मपद में विवेक पर जोर दिया गया है क्योंकि विवेकशील व्यक्ति ही पर्यावरण संरक्षण के लिए सक्रिय रहता है। द्रष्टव्य है निम्नांकित पद –

मगगा न' पत्रिको सेफो सधानं चुतरो पदा।

विरागो सेफो धम्मानं द्विपदान×च चकखुमा।।[14]

अर्थात अष्टांगिक मार्गों में श्रेष्ठ है, चार आर्य सत्य सत्यों में श्रेष्ठ है, वैराग्य धर्मों में श्रेष्ठ है और ज्ञान – नेत्रा वाले व्यक्ति मनुष्यों में श्रेष्ठ है।

000

संदर्भ :

1. रामधारी सिंह दिनकर, 'संस्कृति के चार अध्याय', पृष्ठ 124 ई0 2015

2. धम्मपद, चितवग्गो पद – 43

3. के0 सच्चिदानन्द मूर्त्ति, 'मनुष्य और प्रकृति, समकालीन दार्शनिक समस्याएँ', सं0 यशदेव शल्य, पृ0 167,1966

4. नीतिशास्त्रा, नित्यानंद मिश्र पृ0 536 ई0 2008

5. धम्मपद, अरहन्तवग्गो, 99

6. सौन्दरनन्द, 16, 28, 29

7. धम्मपद 270

8. धम्मपद, 291

9. धम्मपद, 225

10. धम्मपद, 289

11. उपर्युक्त, पृ0 132 ई 2015

12. धम्मपद, 38

13. धम्मपद 43 चितवग्गो 11

14. वही 273. मगगवग्गो. 1